जितना राग है उतना बंध है

भाई ! वीतराग की वाणी में जहाँ जो जिस अपेक्षा कथन है, उसे यथार्थ जानना समझना चाहिये। तीर्थंकर हो या गणधर हो, जबतक चारित्र की पूर्णता न हो, तबतक राग जरूर होता है। साधक दशा में जितना अतीन्द्रिय आनंद का स्वाद आया, उतनी ज्ञान धारा है ह्व मुक्ति मार्ग है तथा जितना राग है, वह कर्म धारा है ह्व बंध का कारण है।

ज्ञानी को भी राग बंध का ही कारण है। 'शुभराग से कल्याण होगा, परम्परा मुक्ति होगी।' यह मान्यता यहाँ निषिद्ध की गई है।

भाई ! यह वीतराग का मार्ग है। वीतराग भगवान का उपदेश तो यह है कि तुझे सुखी होना हो तो हमारे सामने खड़े होकर जो बारम्बार हमारे दर्शन-वंदन-अर्चन करता है ह्व यह सब करना छोड़ दे और अन्तर्मुख होकर अपने त्रिकाली भगवान आत्मा को देख।

भावार्थ यह है कि क्षायोपशमिक ज्ञान अपने निजस्वरूप में अर्थात आत्मा के अतीन्द्रिय आनन्द के अनुभव में अन्तर्मुहूर्त ही रह सकता है। अन्तर्मुहूर्त के पश्चात छद्मस्थ का उपयोग नियम से स्वरूप से विचलित होकर पर का अवलम्बन ले लेता है तथा पर के अवलम्बन लेते ही उसके आत्मा में रागभाव हो जाता है।

अहाहा ! कितना स्पष्ट किया है? सच्चा संत हो या समकिती ज्ञानी हो, जबतक राग है, तबतक बन्ध है ह्व इस वास्तविकता को जानना चाहिए। दृष्टी की अपेक्षा ज्ञानी निरास्त्रव होते हुए भी परिणति में जो जघन्य परिणमन है, वह निश्चित ही बन्ध का कारण है।

ह्व प्रवचनरत्नाकर भाग-5, पृष्ठ-275-276

वीतराग-विज्ञान

वीतराग-विज्ञान ही, तीन लोक में सार।
वीतराग-विज्ञान का, घर-घर होय प्रसार।।

वर्ष : 21 | 244 | अंक : 4

द्रव्यसंग्रह पद्यानुवाद

– डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

मोक्षमार्ग अधिकार

ज्ञान-दर्शन-वीर्य-तप एवं चरित्राचार में।
जो जोड़ते हैं स्वपर को ध्यावो उन्हीं आचार्य को।।५२।।
रतनत्रय युत नित निरत जो धर्म के उपदेश में।
सब साधुजन में श्रेष्ठ श्री उवझाय को वंदन करें।।५३।।
जो ज्ञान-दर्शनपूर्वक चारित्र की आराधना।
कर मोक्षमारग में खड़े उन साधुओं को हो नमन।।५४।।
निज ध्येय में एकत्व निष्पृहवृत्ति धारक साधुजन।
चिन्तन करें जिस किसी का भी सभी निश्चय ध्यान है।।५५।।
बोलो नहीं सोचो नहीं अर चेष्टा भी मत करो।
उत्कृष्टतम यह ध्यान है निज आतमा में रत रहो।।५६।।
व्रती तपसी श्रुताभ्यासी ध्यान में हों धुरंन्धर।
निजध्यान करने के लिए तुम करो इनकी साधना।।५७।।
अल्प श्रुतधर नेमिचंद मुनि द्रव्यसंग्रह संग्रही।
अब दोषविरहित पूर्णश्रुतधर साधु संशोधन करें।।५८।।

ईसवी सन् दो सहस दो अर चतुर्दश दिसम्बर।
को द्रव्यसंग्रह शास्त्र का पूरण हुआ अनुवाद यह।।

आत्मा की उपासना कैसे होती है ?

पूज्यपाद आचार्य देवनन्दिस्वामी के प्रसिद्ध ग्रन्थ इष्टोपदेश के 22 वें श्लोक पर हुए आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के अध्यात्मरसगर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है। मूल श्लोक इसप्रकार है –

संयम्य करणग्राममेकाग्रत्वेन चेतसः ।
आत्मानमात्मवान्ध्यायेदात्मनैवात्मनि स्थितम् ।।22।।

मन की एकाग्रता द्वारा इन्द्रियों के समूह को वश करके अपने में अर्थात् आत्मा में स्थित आत्मा को आत्मा के द्वारा ही ध्याना चाहिये। यही आत्मा की उपासना है।

(गतांक से आगे)

यहाँ शिष्य प्रश्न पूछता है कि आत्मा की उपासना किसप्रकार करना चाहिए ? भगवान की भक्ति–पूजा करने से या शास्त्र वाँचने से भगवान की उपासना होती है या नहीं ?

अरे भाई ! बाहरी भक्ति, पूजा से तो भगवान की उपासना नहीं होती; किन्तु भक्ति आदि क्रिया का अंतर में माहात्म्य रह जाये, वह भी सच्ची उपासना नहीं है। माहात्म्यवाणी भी मूल वस्तु नहीं; क्योंकि उससे जीव बाहर की क्रिया में रह जाता है, इसका उसे भान नहीं होता। विकल्प और राग का माहात्म्य जिसको आता है, उसे निजस्वभाव का माहात्म्य नहीं आता।

आत्मा की उपासना किसप्रकार होती है, उसके उत्तर में यह गाथा लिखी है।

यह उपदेश तो इष्ट उपदेश है। व्यवहार के विकल्प से या निमित्त आदि से आत्मा को सम्यग्दर्शन–ज्ञान या अनुभव होगा – ऐसा उपदेश इष्ट–उपदेश नहीं। यह जीव मन को एकाग्र करके अर्थात् स्व की ओर लक्ष्य करके और पर की ओर से लक्ष्य हटाकर, स्वच्छंदवृत्ति का त्याग करके, स्वयं में स्थित स्वयं के आत्मा को स्वयं से अनुभव कर सकता है। शुद्धभाव की पर्याय द्वारा अखण्डानन्द भगवान आत्मा ध्यान करने में आता

है। इसप्रकार पर की तरफ से लक्ष्य छोड़कर स्व की तरफ लक्ष्य करके निर्मल पर्याय द्वारा आत्मा का ध्यान करना चाहिए, यह ही सच्चे ध्यान की विधि है। इसके अतिरिक्त आत्मा के ध्यान का दूसरा कोई उपाय नहीं है ।

यहाँ सुखस्वरूप आत्मा को शांति किसप्रकार हो, उसकी बात चल रही है। आत्मा की शांति शरीर, वाणी, मन में नहीं; किन्तु आत्मा की शांति आत्मा में ही है, उसके ध्यान करने की बात है।

सर्वप्रथम तो सर्वज्ञ भगवान ने आत्मा का स्वरूप कैसा कहा है ? यह शास्त्रज्ञान से जानना चाहिए, उसके बाद स्वयं का जैसा स्वरूप है, उसमें लीन होकर उसका ध्यान करना चाहिए। यही शांति का उपाय है। दूसरा कोई शांति का या धर्म का उपाय है ही नहीं।

आत्मस्वरूप में एकाग्र होने के लिए पहले मन को इन्द्रिय विषयों से हटाना पड़ेगा अर्थात् मन को विषयों की तरफ जाने से रोकना चाहिए। मन में विकल्प उठता है तो परज्ञेयों की तरफ लक्ष्य जाता है। आंख बन्द हो, फिर भी मन में राग का विकल्प अटूट धाराप्रवाह से चलता रहता है, उसमें आत्मा का कोई हित नहीं है । चैतन्यघन आत्मा में पर की तरफ से उठनेवाले राग के विकल्प को पहले रोक ! ऐसा पूज्यपादस्वामी यहाँ कहते हैं।

अनेक बार जीव को अशुभभाव से बचाने के लिए कथन होता है, इसलिये उससे ऐसा कहने में आता है कि भक्ति, पूजा, श्रवण, दान आदि के शुभभाव कर ! परन्तु परमार्थ से उसमें आत्मा का कोई हित नहीं है। इसलिए यहाँ शुद्धता की प्राप्ति के लिये, आत्मस्वरूप में लीनता के लिये शुभभाव के विकल्प को भी रोकने का उपदेश है। मन का पर की तरफ लक्ष्य होना स्वेच्छाचारवृत्ति है। उसको रोककर जीव स्वरूप में लीनता कर सकता है।

भाई ! बात बहुत सूक्ष्म है; पर मूल हित की है। पिछली गाथा में आत्मा के स्वरूप को बताया था कि आत्मा एक समय में लोकालोक को जाननेवाला, शरीरप्रमाण, नित्य, अनन्त सौख्यवान वस्तु है। अब यहाँ 22 वीं गाथा में आत्मा के अंतर-स्वसंवेदन की विधि बताते हैं। प्रत्येक आत्मा को करनेयोग्य कार्य तो एक स्वसंवेदन ही है।

आत्मद्रव्य अचिंत्य महिमावन्त द्रव्य है। उसका क्षेत्र असंख्यप्रदेश, उसका काल अमाप, उसके भाव की संख्या भी अमाप और भाव की सामर्थ्य भी अमाप है। सर्वप्रथम आत्मा का स्वरूप शास्त्रज्ञान द्वारा द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव से निश्चित करना चाहिए। शास्त्रज्ञान से आत्मा का स्वरूप नक्की किये बिना मात्र कपोल-कल्पित ध्यान करने जाये तो यह ध्यान किसी काल में सिद्ध नहीं हो सकता अर्थात् ऐसे ध्यान से कुछ भी लाभ नहीं होता। आत्मा का स्वरूप समझे बिना आत्मा की महिमा नहीं आती; मात्र विकल्प, राग तथा अल्पज्ञता आदि क्षणिक भावों की महिमा आती है।

आत्मा, स्वयं से स्वयं का स्वसंवेदन प्रत्यक्ष कर सकता है। स्वसंवेदन से ही मोक्षमार्ग शुरु होता है। देव-शास्त्र-गुरू के प्रति भक्ति का भाव मोक्षमार्ग नहीं। सर्वप्रथम करने जैसा कार्य तो स्वसंवेदन है। भगवान का यह हितकारी उपदेश ही इष्ट-उपदेश है।

आत्मा को आत्मा से ही ध्याओ अर्थात् राग और निमित्त के अवलम्वन बगैर स्वसंवेदन प्रत्यक्ष ज्ञान से आत्मा के त्रिकाली स्वभाव को ध्याओ। जैसे हलवा बनाना हो तो पहले उसे बनाने की विधि सीखना चाहिए। वैसे ही आत्मा का स्वसंवेदन करना हो तो पहले उसकी विधि सीखना चाहिए, आत्मा के स्वरूप को ज्ञान में लेना चाहिए। रागादि विकल्प हितकारक नहीं, सहायक नहीं - ऐसा नक्की करना चाहिए; क्योंकि ज्ञान से ज्ञान होता है, राग से ज्ञान नहीं होता है। स्वभाव के वेदन के लिए स्वभाव के अतिरिक्त दूसरे कारण अर्थात् अन्य साधनों की जरूरत नहीं। ज्ञान से ही ज्ञान प्रगट होता है, उसके लिए अन्य कारणों की जरूरत नहीं; इसलिये अन्य कारणों को मिलाने की चिंता छोड़ दे !

मेरे जैसा कोई सुखी नहीं; क्योंकि मैं परम स्वाधीन हूँ। मुझे अपने कार्यों को करने के लिए अन्य का अवलम्बन नहीं लेना पड़ता; इसलिए मैं परम सुखी हूँ - ऐसा पहले विश्वास करो ! अस्तिपने-सत्तापने विराजमान भगवान आत्मा की स्वसत्ता का विश्वास तो कर ! अपरिमित आनन्द, ज्ञान आदि अनन्त भावों से भरा स्वभाव, तेरे स्वयं के स्वभाव के साधन से ही प्रगट होगा । पर के साधन से स्वयं का स्वभाव पलटे - ऐसा आत्मा का स्वरूप नहीं है । **(क्रमशः)**

णमिऊण जिणं वीरं

परमपूज्य सर्वश्रेष्ठ दिगम्बराचार्य कुन्दकुन्द के प्रसिद्ध परमागम नियमसार की **प्रथम गाथा** पर हुए आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के अध्यात्मरसगर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है।

गाथा मूलत: इसप्रकार है –

णमिऊण जिणं वीरं अणंतवरणाणदंसणसहावं।
वोच्छामि णियमसारं केवलिसुदकेवली भणिदं ।।

अनंत और उत्कृष्ट ज्ञान-दर्शन जिसका स्वभाव है – ऐसे केवलज्ञानी और केवलदर्शी जिनवीर को नमन करके मैं केवली तथा श्रुतकेवलियों का कहा हुआ नियमसार कहूँगा।

(गतांक से आगे .....)

महावीर भगवान ने जन्म-वृक्ष के बीज का नाश किया है और समवशरण में विराजते हैं। इस टीका के रचनाकाल में तो वे मोक्ष पधारे हैं। फिर भी टीकाकार अपने समक्ष ही भगवान विराज रहे हों – ऐसा लक्ष में लेकर कहते हैं कि भगवान समवशरण में विराजते हैं और इन्द्र आकर नमन करते हैं।

भगवान की दिव्यध्वनि में जो उद्घोष हुआ उसी में से हम कहेंगे। सर्वज्ञवाणी की परम्परा हमारे पास आई और हमने उसका भाव समझा तथा 'भगवान आज भी मानो समवशरण में विराज रहे हों और दिव्यध्वनि खिर रही हो' ऐसा आचार्यदेव कहते हैं।

जैसे जन्मदिवस पर कहते हैं कि 'आज मेरा जन्मदिन है'। इसप्रकार पुन: उस जन्मप्रसंग को ताजा बनाते हैं – वैसे ही अपने ज्ञान में सर्वज्ञ को ताजा करके आचार्यदेव कहते हैं कि हे नाथ ! आप समवशरण में हमारे समीप ही विराज रहे हो, ऐसा हमें अनुभव होता है। ऐसा कहकर आचार्य ने भगवान को अपने भाव में अवतरित किया है।

भगवान की आत्मा में केवलज्ञान-दर्शनरूपी लक्ष्मी का वास है। ऐसी लक्ष्मी ही हमारे लिये आदरणीय है। आत्मा में जड़ की लक्ष्मी वास नहीं करती। भगवान समवशरण

में वास करते हैं और भगवान में केवलज्ञान लक्ष्मी बसती है। जगत की जड़लक्ष्मी की प्रीति छुड़ाकर ज्ञानलक्ष्मी की प्रीति कराने के लिये केवलज्ञान को लक्ष्मी की उपमा दी है। ऐसे भगवान जयवन्त वर्तते हैं। हमारा ज्ञान जयवन्त वर्तता है, इसलिये भगवान जयवन्त वर्तते हैं – ऐसा कहा।

भगवान के द्वारा कहे गये शास्त्रों का भाव अपने में जयवन्त वर्तता है। इसलिये मानते हैं कि भगवान ही समवशरण में विराजते हुए जयवन्त वर्तते हैं – ऐसा आनन्द अन्तर से आता है।

इसप्रकार 'भगवान जयवन्त वर्तते हैं' – ऐसा कहकर माँगलिक किया। अब आगामी गाथा कहते हैं –

मग्गो मग्गफलं ति य दुविहं जिण सासणे समक्खादं।
मग्गो मोक्ख उवायो तस्स फलं होइ णिव्वाणं ।।2।।

मार्ग और मार्गफल ऐसे दो प्रकार का कथन जिनशासन में किया गया है। मार्ग मोक्ष-उपाय है और उसका फल निर्वाण है।

मार्ग अर्थात् मोक्ष का पंथ। सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र मोक्ष का मार्ग है और वह आत्मा की निर्मल वीतरागी साधकदशा है तथा पूर्ण निर्मल मोक्षपद की प्राप्ति वह मार्ग का फल है। स्वर्ग मिले वह मोक्षमार्ग का वास्तविक फल नहीं है, वह तो राग का फल है।

जैसे किसी नगर में जाने की सड़क होती है, वैसे ही सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप जो मोक्षमार्ग है, वह मोक्षनगर की सड़क है और मोक्षदशा प्रकटे, वह मार्ग का फल है। इन दोनों का कथन जिनशासन में किया गया है। जिनशासन के अतिरिक्त अन्यत्र कहीं मार्ग या मार्गफल का यथार्थ कथन नहीं है। मोक्ष का उपाय वह मार्ग है और मोक्ष वह मार्ग का फल है। प्रथम ही मार्ग क्या है ? यह निर्णय करना चाहिये। मार्ग का स्वरूप सर्वज्ञ के शासन सिवाय अन्यत्र यथार्थ होता नहीं।

प्रथम गाथा में आचार्य ने नियमसार कहने की प्रतिज्ञा की थी। नियम अर्थात् रत्नत्रयरूप मोक्षमार्ग और सार अर्थात् शुद्धता; शुद्ध रत्नत्रयरूप मोक्षमार्ग? यह नियमसार है। मोक्षमार्ग क्या और उसका फल क्या है ? यह द्वितीय गाथा में कहते हैं।

शुद्ध आत्मा की श्रद्धा, ज्ञान और रमणता मोक्षमार्ग है। अनन्त शक्ति का पिण्ड आत्मा है। उसके आश्रय से होनेवाली रागरहित प्रतीति, ज्ञान और रमणता ही मोक्षमार्ग है। बीच में व्यवहाररत्नत्रय का विकल्प वास्तविक मोक्षमार्ग नहीं है, अपितु बन्धमार्ग है। मोक्ष का मार्ग तो निरपेक्ष है। राग में पर का अवलम्बन है, वह मोक्षमार्ग नहीं है।

आत्मा की पूर्ण सहजानन्ददशा प्रकट करने के लिये सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र ही मार्ग है। रत्नत्रय के बिना मोक्षफल नहीं मिलता, अत: शुद्धरत्नत्रय ही मोक्षमार्ग है और मुक्तिरूपी स्त्री के विशाल भालप्रदेश में शोभा-अलंकाररूप तिलकपना मोक्षमार्ग का फल है। मोक्षरूपी स्त्री को वरण करना वह मार्गफल है।

मोक्षमार्ग को रत्न की उपमा है, सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्र वह रत्नत्रय है और मोक्ष को स्त्री की उपमा दी है। मोक्षमार्ग रागरहित है और उसका फल पूर्णानन्दमय मोक्षदशा है। इसप्रकार मार्ग और मार्ग का फल ऐसे दो प्रकार का कथन वीतराग सर्वज्ञ के शासन में है। भगवान ने ऐसे ही मोक्षमार्ग से मोक्षदशा प्राप्त की है। चैतन्यस्वभाव के आश्रय से होनेवाली श्रद्धा-ज्ञान-रमणता वह मार्ग है और पूर्ण मोक्षदशा वह मार्गफल है।

सम्यग्ज्ञान में सम्यग्ज्ञानी का ही निमित्त होता है, अन्य मिथ्या निमित्त नहीं होता। तथापि उस निमित्त की ओर के लक्षवाला शुभराग मोक्षमार्ग नहीं है। निमित्त की ओर से लक्ष को हटाकर स्वभाव के आश्रय से श्रद्धा, ज्ञान और चारित्र करे वही मोक्षमार्ग है। वही गुरु की आज्ञा है अर्थात् ऐसी वीतरागी परिणति प्रकट करना ही गुरु की आज्ञा का आराधन है। राग में मोक्षमार्ग माननेवाले ने गुरु की आज्ञा की अवहेलना की है।

वीतरागी शासन की आज्ञा तो ऐसी है कि आत्मा के आश्रय से जो वीतरागी श्रद्धा-ज्ञान-चारित्र प्रकट हुआ है, वही मोक्षमार्ग है। देव-शास्त्र-गुरु की ओर का शुभराग मोक्ष का मार्ग नहीं है। तो भी सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति में निमित्तरूप से सच्चे देव-शास्त्र-गुरु ही होते हैं, अज्ञानी की वाणी से सम्यग्ज्ञान नहीं हो सकता। ज्ञानी की ही देशना निमित्तरूप से मिलना चाहिये, किन्तु वह तो व्यवहार में जाती है। सच्चे देव-शास्त्र-गुरु के लक्ष में वास्तव में मोक्षमार्ग नहीं है। मोक्षमार्ग तो निजपरमात्मतत्त्व की निरपेक्ष श्रद्धा-ज्ञान-चारित्र ही है - ऐसा मार्ग प्रकट करना वही वीतराग की आज्ञा है। चार ज्ञान के धारक गणधरादि सन्तों ने ऐसा ही मार्ग और मार्गफल बताया है। **(क्रमश:)**

शक्तियों का संग्रहालय : भगवान आत्मा

परमपूज्य सर्वश्रेष्ठ दिगम्बराचार्य कुन्दकुन्द के प्रसिद्ध परमागम समयसार नामक ग्रन्थाधिराज पर परमपूज्य आचार्य अमृतचन्द्रदेव ने 'आत्मख्याति' नामक संस्कृत टीका लिखी है, उसके अन्त में परिशिष्ट के रूप में अनेकान्त का विस्तृत वर्णन करते हुये आत्मा की 47 शक्तियों का वर्णन किया है, साथ ही अनेक कलश भी लिखे हैं। उन पर आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी ने समय-समय पर अतिमहत्त्वपूर्ण प्रवचन किये हैं, जो पाठकों के लाभार्थ क्रमश: प्रस्तुत हैं।

'पूर्वकथित चिति, दृशि, ज्ञान, सुख आदि अनेक शक्तियों से युक्त आत्मा है; तथापि वह ज्ञानमात्राता को नहीं छोड़ता' - इस अर्थ का कलश काव्य कहते हैं -

(वसंततिलका)

इत्याद्यनेकनिजशक्तिसुनिर्भरोऽपि
यो ज्ञानमात्रमयतां न जहाति भाव:।
एवं क्रमाक्रमविवर्तिविवर्तचित्रं
तद्द्रव्यपर्ययमयं चिदिहास्ति वस्तु।।264।।

भगवान आत्मा शक्कर में मिठास की भांति निज शक्तियों से भलीभांति भरपूर है। अहा ! चैतन्यमूर्ति भगवान आत्मा अनन्तशक्तिमय है। आत्मा और शक्तियाँ अभेद-एकरूप हैं। अनन्त गुणों एवं शक्तियों से भरा होने पर भी भगवान आत्मा ज्ञानमात्रापने को नहीं छोड़ता। अक्रम वर्तते गुणों एवं क्रम से वर्तती पर्यायों में ज्ञान व्यापक है - ऐसा चैतन्य भावमय भगवान आत्मा है। देखो ! यहाँ आत्मा में अक्रम वर्तते गुण व क्रम से वर्तती पर्यायें कहकर प्रमाणज्ञान सिद्ध किया है। प्रत्येक गुण-पर्याय में ज्ञान व्यापक है। इसी से इसे ज्ञानमात्रा आत्मा कहा है।

आत्मा अनन्त शक्तियों से भरपूर ज्ञानमात्रावस्तु है, विकार व कर्मों से भरा नहीं है। वह इनसे भिन्न शुद्ध चैतन्यवस्तु है। जिसतरह अग्नि कभी उष्णता

को नहीं छोड़ती; उसीतरह पर से व विकार से भिन्न शुद्ध चैतन्यवस्तु अपने ज्ञानमात्रापने को कभी नहीं छोड़ती; इसलिए हे भाई ! ज्ञानभाव से तू अपने आत्मा को लक्ष्य में लेकर उसका अनुभव कर।

जिसने अन्तर्मुख होकर ज्ञानभाव से निज चैतन्यवस्तु का अनुभव किया, वह ज्ञानी धर्मी है। वह ज्ञानभावपने से ही सदा वर्तता है। वह ज्ञानभाव को कभी नहीं छोड़ता। ऐसा साधक पुरुष यह जानता है कि - मेरा आत्मा सहज ही क्रमपर्यायरूप और अक्रमगुणरूप स्वभाववाला है। अनन्तगुण एकसाथ अक्रमपने वस्तु में तिर्यक्प्रचयरूप रहते हैं तथा पर्यायें नियत क्रमपने ऊर्द्धप्रचयरूप होती हैं। अहा ! अक्रमवर्ती गुणों और क्रमवर्ती पर्यायों में मैं सदा ज्ञानमात्राभावपने से वर्तता हूँ - ऐसे निर्णय में ज्ञानी को ज्ञातास्वभाव के आलम्बन का पुरुषार्थ वर्तता है। जो किंचित् है, उसे ज्ञानी ज्ञानभाव से बाहर परज्ञेयरूप से ही जानता है।

बस, इसतरह ज्ञानमात्रभावपने ही परिणमता हुआ साधक साध्य (सिद्धपद) की ओर बढ़ता चला जाता है।

देखो, आत्मा को ज्ञानमात्र कहा, इसका अर्थ यह नहीं है कि वह एक स्वरूप ही है; परन्तु वह द्रव्यपर्यायमय है - ऐसा जानना। वस्तु जैसी है वैसी ही अनेकान्तस्वरूप मानना।

प्रश्न - समयसार की छठवीं गाथा में तो आत्मा के प्रमत्त-अप्रमत्तपने का निषेध किया है ?

उत्तर - हाँ, वहाँ बात ही जुदी है। वहाँ तो दृष्टि के विषयभूत भगवान आत्मा को एक ज्ञायकमात्रारूप से बताने का प्रयोजन है और यहाँ दृष्टि व दृष्टि का विषय - दोनों मिलकर एक चैतन्यवस्तु आत्मा - ऐसा प्रमाणज्ञान कराया है; इसलिए कहते हैं कि - चैतन्य वस्तु द्रव्य-पर्यायमय है। इसमें यहाँ निर्मलपर्याय की बात है। अशुद्धता तो शक्ति का परिणमन नहीं है।

देखो, कहा है न ! आत्मा अनन्त शक्तियों से भरपूर है। अपने ज्ञान उपयोग को अन्तर्मुख करने पर वह अनन्त शक्तिसम्पन्न भगवान आत्मा अनुभव में आता है तथा साथ ही शक्तियाँ निर्मलरूप से उछलती हैं, परिणमती हैं। इसतरह

निर्मल परिणमते हुए जब केवलज्ञान हो जाता है तब अनन्त शक्तियाँ तथा अनन्त प्रदेशों को भिन्न-भिन्न करके प्रत्यक्ष जानता है; इसलिए हे भाई ! तेरी चैतन्य सम्पदा साक्षात् देखनी हो तो तू अपने ज्ञानोपयोग को राग से मुक्त करके अपने अन्तर में स्वभाव सन्मुख कर दे। स्वभाव में अन्तर्लीन होकर जानते हुए अनन्त चैतन्य सम्पदा साक्षात् ज्ञात हो जायेगी।

'इस अनेकस्वरूप-अनेकान्तमय-वस्तु को जो जानते हैं, श्रद्धा करते हैं और अनुभव करते हैंय वे ज्ञानस्वरूप होते हैं' - इस आशय का, स्याद्वाद का फल बतानेवाला काव्य कहते हैं -

(वसंततिलका)

नैकान्तसंगतदशा स्वयमेव वस्तु-
तत्त्वव्यवस्थितिमिति प्रविलोकयन्तः।
स्याद्वादशुद्धिमधिकामधिगम्य संतो
ज्ञानीभवन्ति जिननीतिमलंघयन्तः।।265।।

धर्मी सत्पुरुष स्वयं ही अपने ज्ञान की निर्मलदशा में अनेकान्तमय आत्मवस्तु को स्याद्वाद की नीति का उल्लंघन न करते हुए सुसंगत दृष्टि से देखता है, जानता है।

यहाँ स्याद्वादी जैननीति का अर्थ यह है कि वस्तु नित्य-अनित्य, एक-अनेक, सत्-असत्, तत्-अतत् इत्यादि विरोधी प्रतीत होते हुये द्विविध धर्मों को प्रकाशित करनेवाली है। यह वस्तु जैसी है, वैसी ही स्वीकार करना चाहिये। तथा ज्ञान एवं कथन में जहाँ जो अपेक्षाएँ लगती हैं, उन सब दृष्टिकोणों से वैसा ही यथार्थ जानकर स्वीकार करना चाहिये। (क्रमशः)

दीपावली पर्व कैसा ?

समझ में नहीं आता - इस दीपावली को प्रकाश का पर्व कहें या अंधकार का ? इसने हमारे वीर प्रभु को हमसे छीन लिया है। पर उन्हें निर्वाण प्राप्त हुआ था, अतः लोग शोकमग्न होकर भी हर्षित थे। सबकी दशा अपनी प्रिय पुत्री को सुयोग्य वर के साथ विदा करनेवाली ममतामयी माँ जैसी हो रही थी। हर्षमय शोक और शोकमय हर्ष के इस पावन प्रसंग का वर्णन शब्दों में अवर्णनीय है। **- ती.महावीर और उनका सर्वोदय तीर्थ, पृष्ठ - 86**

ज्ञान गोष्ठी

सायंकालीन तत्त्वचर्चा के समय विभिन्न मुमुक्षुओं द्वारा
पूज्य स्वामीजी से पूछे गये प्रश्न और स्वामीजी द्वारा दिये गये उत्तर

प्रश्न : यदि पूजा-भक्ति आदि शुभराग में धर्म नहीं है, तो श्रावक के लिए धर्म क्या है ?

उत्तर : देह-मन-वाणी-राग से भिन्न भगवान आत्मा की श्रद्धा-ज्ञान करना तथा आत्मा का अनुभव करना यही श्रावक का धर्म है।

प्रश्न : तब क्या श्रावक पूजा-भक्ति आदि कार्य न करे ?

उत्तर : श्रावक को पूजा-भक्तिका शुभराग आता है, आये बिना रहता नहीं; परन्तु वह धर्म नहीं है। शुभराग है और उससे भिन्न आत्मा का अनुभव करना धर्म है।

प्रश्न : निश्चय के साथ होने वाले उचित राग को क्रोध कहते हैं क्या ?

उत्तर : नहीं, यहाँ समयसार गाथा 69/70/71 में जिसको आत्मस्वभाव की रुचि नही है; अनादर है; उसके रागभाव को क्रोध कहा है अर्थात् मिथ्यात्व सहित होनेवाले रागादिभाव को क्रोध कहा है। ज्ञानी में होनेवाले अस्थिरता के राग का तो ज्ञानी को ज्ञान होता है। ज्ञानरूप परिणमनेवाले ज्ञानी को आनन्दरूप आत्मा रुचता है - अनुभव में आता है; इसलिए उसे राग की रुचिरूप क्रोध होता ही नहीं; अत: क्रोध मालूम ही नहीं पड़ता। अज्ञानी को दु:खरूपभाव-रागभाव रुचता है और आनन्दरूप भाव रुचता नहीं; इसलिए उसको क्रोधादि का ही अनुभव होता है, आत्मा मालूम नहीं पड़ता। आत्मा अतीन्द्रिय आनन्दस्वरूप है, उसकी तो रुचि नहीं और पुण्य-परिणाम की रुचि है - यह आत्मा का अनादर है; अत: ऐसे अज्ञानी को अपने स्वरूप के प्रति क्रोध है - ऐसा समझना।

प्रश्न : ज्ञानी की परीक्षा अज्ञानी जीव किस विधि से करते हैं ? वे अज्ञानी कितने प्रकार के हैं ? तथा ज्ञानी की परीक्षा की सही विधि क्या है ?

उत्तर : ज्ञानी की गलत विधि से परीक्षा करने वाले अज्ञानी तीन प्रकार के हैं और वे तीन प्रकार से परीक्षा करते हैं।

प्रथम नम्बर के अज्ञानी वे हैं, जो मात्र बाहर के वेष से परीक्षा करते हैं अर्थात् मात्र बाह्य वेष देखकर ही उनमें ज्ञानी होने की कल्पना कर लेते हैं। **द्वितीय** नम्बर के अज्ञानी वे हैं, जो बाहर की क्रिया देखकर परीक्षा करते हैं। अर्थात् बाहर में चलना, फिरना, उठना, बैठना, आहार, शयन आदि में सावधानी, शुद्धता आदि देखकर ही ज्ञानी मान बैठते हैं। **तृतीय** नम्बर के अज्ञानी वे हैं, जो कषाय की मंदता देखकर परीक्षा करते हैं अर्थात् प्रतिकूल संयोगों के मिलने पर जो क्रोधादि नहीं करते, परिणामों में सरलता रखते हैं, बाह्य परिग्रह का विशेष लोभ नहीं रखते, शरीर व भोजनादि के प्रति अधिक आसक्ति नहीं रखते, उन्हें ज्ञानी होना स्वीकार कर लेते है; परन्तु यह ज्ञानी के पहचानने की वास्तविक रीति नहीं है।

जो सच्चा जिज्ञासु है, वह तो अन्तर की दृष्टि से परीक्षा करता है कि सामनेवाले जीव का श्रद्धा-ज्ञान कैसा है ? उसे चैतन्यभगवान की श्रद्धा है या नहीं ? राग से भिन्न चैतन्य स्वभाव की प्रतीति है या नहीं ? राग होता है, उससे लाभ मानता है या उससे भिन्न रहता है ? उसकी रुचि का जोर किस तरफ काम करता है ? उसके वेदन में किसकी मुख्यता है ? इसप्रकार अन्दर की श्रद्धा और ज्ञान से ही ज्ञानी की पहचान सुपात्र जीव करता है।

प्रश्न : तत्त्वचर्चा-स्वाध्याय में रहनेवाले सर्वार्थसिद्धि के देव की अपेक्षा पाँचवे गुणस्थानवर्ती पशु की शांति विशेष होती है क्या ?

उत्तर : पाँचवें गुणस्थानवाले पशु के दो कषाय चौकड़ी का अभाव होने से देवों की अपेक्षा शांति अधिक होती है। चौथे गुणस्थानवाला देव शुभ में हो तो भी शांति कम और पाँचवे वाला पशु या मनुष्य अशुभ में हो तो भी उसे शांति अधिक होती है।

प्रश्न : धर्म करने में द्रव्य-गुण-पर्याय को समझने की क्या आवश्यकता है ? दान-व्रत-तप करने से तो धर्म होता ही है न ?

उत्तर : दान-व्रत-तप करे और शुभराग से लाभ माने - धर्म माने तो मिथ्यात्व का महान पाप बँधता है। व्रतादि के परिणाम तो रागरूप हैं, बन्धरूप हैं और धर्म तो वीतराग परिणाम है। आत्मा आनन्दस्वरूप महाप्रभु है, उसे द्रव्य-गुण-पर्याय के स्वरूप से पहचाने तो राग से भिन्न पड़कर चैतन्यस्वरूप आत्मा में एकाग्रता हो और धर्म हो।

राज्यपाल निर्मलचन्दजी जैन के निधन से दिग. जैनसमाज शोकमग्न

जयपुर (राज.) : रविवार, दिनांक 22 सितम्बर 2003 को राजस्थान राज्य के महामहिम राज्यपाल श्री निर्मलचन्दजी जैन का दिल का दौरा पडने से रात्रि 2:07 बजे अकस्मात् निधन हो गया।

आपके निधन से सम्पूर्ण राजस्थान की जनता और भारतवर्ष का सम्पूर्ण जैन समाज शोक सन्तप्त है। आपने राज्यपाल जैसे महामहिम पद पर आरूढ होकर दिगम्बर जैनसमाज को गौरवान्वित किया है। आपका जीवन सदैव सादगी, सहजता और धर्मपरायणता का प्रतीक था। साथ ही आप हँसमुख, हाजिर जवाब एवं मिलनसार व्यक्तित्व के धनी थे। आप अच्छे समाजसेवी, धर्मनिष्ठ एवं जैन समाज की अनेक संस्थाओं के पदाधिकारी भी रहे।

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के प्रति आपका स्नेहभाव तो प्रारंभ से ही रहा। श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के उद्घाटन समारोह के अवसर पर 1977 में आप विशिष्ट अतिथि के रूप में पधारे थे। राजस्थान के राज्यपाल बनने के पश्चात् तो अनेक अवसरों पर आप प्राय: टोडरमल स्मारक भवन आया ही करते थे। अभी देहावसान के 11 दिन पूर्व ही क्षमापना समारोह में मुख्यअतिथि के रूप में आप टोडरमल स्मारक पधारे थे।

इसके पूर्व दिनांक 27 जुलाई 2003 को टोडरमल स्मारक में आयोजित छब्बीसवें आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर का उद्घाटन भी आप ही के कर-कमलों से सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर जयपुर की 15 विभिन्न संस्थाओं एवं सम्पूर्ण भारत के विभिन्न प्रान्तों से पधारे प्रतिनिधि मुमुक्षुओं द्वारा आपका सम्मान समारोह आयोजित किया गया था।

आपने अपने चार माह के कार्यकाल में जयपुर प्रवास के दौरान जयपुर के सैंकड़ों दिगम्बर जैन मंदिरों के दर्शन किये। प्रतिदिन प्रात: अलग-अलग मंदिरों के दर्शन करने के लिये जाना आपका नित्यक्रम ही था। श्री टोडरमल स्मारक भवन स्थित त्रिमूर्ति जैनमंदिर के दर्शन-पूजन करने तो प्राय: आते ही रहते थे।

प्रशासकीय व्यस्ततम कार्यक्रमों के होते हुये भी आपने अपने धार्मिक संस्कारों को कभी नहीं छोड़ा। दिनांक 31 अगस्त से 9 सितम्बर तक पर्यूषण पर्व के दौरान आपने अनेक बार डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के प्रवचन सुने।

आपके चिर वियोग से सम्पूर्ण दिगम्बर जैनसमाज को अपूरणीय क्षति हुई है।

संक्षिप्त परिचय : 24 सितम्बर 1928 को आपका जन्म जबलपुर के प्रतिष्ठित भारिल्ल परिवार में हुआ। बचपन से ही आप प्रतिभासम्पन्न एवं अनुशासन प्रिय थे। आपने अर्थशास्त्र विषय में स्नातकोत्तर एवं विधि स्नातक की परीक्षा उत्तीर्ण की। 1945 में आप आर.एस.एस. के कार्यकर्त्ता के रूप में अग्रणी रहे। आपने 1951 में वकालत शुरु कर म.प्र., छत्तीसगढ़ आदि के उच्च न्यायालयों में संविधान के विशेषज्ञ अधिवक्ता का कार्यभार संभाला। सुन्दरलालजी पटवा के शासनकाल में 1990 से 1992 तक मध्यप्रदेश के महाधिवक्ता रहे। 14 मई 03 को राजस्थान के राज्यपाल मनोनीत किये गये।

देहावसान का घटनाक्रम : दिनांक 21 सितम्बर रात्रि 10 बजे आप प्रसन्न मूड में थे। 11.40 बजे टी.वी. देखते-देखते सांस लेने में दिक्कत हुई तथा कुर्सी से गिर गये। 11.45 पर पर्सनल फिजीशियन डॉ.सुधीर भण्डारी ने ड्रिप इंजेक्शन दिया। 12.00 बजे एस.एम.एस. अस्पताल में इमरजेंसी में दाखिल किया। 12.10 तक प्राथमिक उपचार के बाद कुछ सुधार। 12.15 पर आई.सी.यू. में शिफ्ट, दिल्ली के डॉ. त्रेहान से परामर्श, बचाने के प्रयास किये; किन्तु 2.07 पर सांसे थम गई।

दिनांक 22 सितम्बर को प्रात: राजभवन में आपके शव पर श्रद्धांजलि समर्पित करने हेतु राजस्थान के मुख्यमंत्री श्री अशोक गहलोत, पूर्व राज्यपाल श्री अशुंमान सिंह, भाजपा प्रदेशाध्यक्ष वसुन्धराराजे सिंधिया आदि राजनेताओं, सेना, पुलिस व प्रशासन के वरिष्ठ अधिकारी तथा डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल, पण्डित रतनचन्द भारिल्ल, श्री नरेशकुमार सेठी, श्री महेन्द्रकुमार पाटनी, श्री राजकुमार काला आदि दिगम्बर जैनसमाज की अनेक संस्थाओं के पदाधिकारी उपस्थित थे। इस अवसर पर श्री टोडरमल दिग. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के समस्त छात्रों ने भी श्रद्धासुमन अर्पित किये।

गुलाबी राजभवन के बैंक्वेट हॉल में जनता के दर्शनार्थ रखे गये पार्थिव देह के ताबूत को जैसे ही सैन्य अधिकारियों ने उठाया तो पूरा हॉल णमोकार महामंत्र से गूँज उठा।

तदुपरान्त आपकी धर्मपत्नी, राजस्थान के मुख्यमंत्री श्री अशोक गहलोत, राजस्थान के वित्तमंत्री श्री प्रद्युम्न सिंह, विपक्ष के नेता श्री गुलाबचन्द कटारिया, भाजपा की प्रदेशाध्यक्ष वसुन्धराराजे सिन्धिया, डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल एवं श्रीमती गुणमाला भारिल्ल के साथ आपके पार्थिवदेह को वायुयान में जयपुर से जबलपुर (म.प्र.) ले जाया गया।

जबलपुर में अन्त्येष्टी क्रिया के प्रसंग पर उक्त सभी के अतिरिक्त मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री श्री दिग्विजय सिंह, प्रदेश वनमंत्री हरवंश सिंह तथा जबलपुर के प्रभारीमंत्री श्री सत्येन्द्र पाठक भी उपस्थित थे।

शोक सभा : दिनांक 23 सितम्बर को सकल जैनसमाज जयपुर की ओर से भट्टारकजी की नसिंया में आयोजित शोक सभा की अध्यक्षता दिगम्बर जैन मंदिर महासंघ के अध्यक्ष ज्ञानचंदजी खिन्दूका तथा पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के मानद् महामंत्री डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल ने की।

इस अवसर पर लोकायुक्त श्री मिलापचन्द जैन, श्री नरेश सेठी, डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल, डॉ. राजेन्द्र के. गोधा, पार्षद शीला ड्योडया आदि ने राज्यपाल के व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व पर प्रकाश डालते हुये राज्यपाल के साथ गुजारे हुये अपने संस्मरण व्यक्त किये। इसके अतिरिक्त शोक सभा में दिगम्बर, श्वेताम्बर, ओसवाल आदि समाजों की विभिन्न सामाजिक, धार्मिक और शिक्षण संस्थाओं के प्रतिनिधियों द्वारा राज्यपाल जैन को श्रद्धासुमन अर्पित किये। सभा का संचालन श्रीमती शशि जैन ने किया।

श्री टोडरमल स्मारक भवन में शिक्षण-शिविर के अवसर पर दिनांक 8 अक्टूबर 2003 को रात्रि में शोक सभा का आयोजन किया, जिसमें डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, श्री सम्पतकुमार गदैया एवं जैन समाज के विशिष्ट व्यक्तियों के अतिरिक्त जबलपुर से पधारे श्री निर्मलचन्दजी जैन के परिजनों ने भी अपने संस्मरण सुनाये। सभा का संचालन श्री पवन बज ने किया। आपके चिर-वियोग से पूरे देश से पधारे शिविरार्थी शोक संतप्त थे।

डॉ. भारिल्ल को बधाई !

जयपुर, जैनदर्शन के मर्मज्ञ विद्वान डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल को राजस्थान विश्वविद्यालय का सीनेटर नियुक्त किया गया है; एतदर्थ आपको हार्दिक शुभकामनायें।

छठवाँ आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर सानन्द सम्पन्न

जयपुर (राज.): ज्ञानतीर्थ श्री टोडरमल स्मारक भवन में पण्डित टोडरमल सर्वोदय ट्रस्ट द्वारा आयोजित छठवाँ आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर दिनांक 2 अक्टूबर से 11 अक्टूबर, 2003 तक अनेक सफलताओं के साथ सानन्द सम्पन्न हुआ।

इस अवसर पर देश-विदेश में ख्यातिप्राप्त तार्किक विद्वान डॉ.हुकमचन्दजी भारिल्ल के प्रात: एवं रात्रि में प्रवचनसार के शुद्धोपयोग अधिकार पर हृदयग्राही मार्मिक प्रवचन हुए। प्रात: डॉ. भारिल्ल के प्रवचनों के पूर्व आध्यात्मिक सत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के सी.डी. प्रवचनों का लाभ समाज को मिला।

शिक्षण कक्षाओं में प्रतिदिन पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल,जयपुर द्वारा षट्कारक, ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री द्वारा छहढाला, ब्र. यशपालजी जैन द्वारा गुणस्थान विवेचन, पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री द्वारा अनेकान्त स्याद्वाद एवं क्रमबद्धपर्याय, पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील द्वारा पंचभाव, पण्डित संजीवकुमारजी गोधा द्वारा परमभाव प्रकाशक नयचक्र की कक्षा तथा पण्डित जितेन्द्रजी राठी द्वारा बालकक्षा ली गई।

सायंकालीन प्रथम प्रवचनों में पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल जयपुर, पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा इन्दौर, ब्र. अभिनन्दनकुमारजी खनियांधाना, पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री छिन्दवाड़ा, पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील जयपुर, पण्डित अध्यात्मप्रकाशजी भारिल्ल मुम्बई एवं पण्डित संजीवकुमारजी गोधा, जयपुर के विविध विषयों पर प्रवचनों का लाभ मिला।

दोपहर की व्याख्यान माला में डॉ. श्रेयांसकुमारजी सिंघई जयपुर, पण्डित कमलेशजी मौ, पण्डित कमलचन्दजी पिड़ावा, डॉ. महावीरप्रसादजी टोकर, पण्डित गुलाबचन्दजी जैन भोपाल, पण्डित सुरेशजी टीकमगढ़, पण्डित सुनिलजी शास्त्री प्रतापगढ़, डॉ. भागचन्दजी शास्त्री बडागाँव एवं पण्डित धर्मेन्द्रकुमारजी शास्त्री बण्ड़ा केविविध विषयों पर प्रवचन हुए।

शिविर का उद्घाटन 2 अक्टूबर,03 को प्रात: श्री अशोककुमारजी चक्रेशकुमारजी जैन कोलकाता ने किया । सभा की अध्यक्षता श्री अजितकुमारजी तोतूका ने की। मुख्यअतिथि श्री महावीरप्रसादजी सरावगी कोलकाता तथा विशिष्टअतिथि श्री बालचन्दजी पाटनी कोलकाता, ब्र. धन्यकुमारजी बेलोकर गजपंथा, श्री जुगराजजी कासलीवाल कोलकाता एवं श्री शान्तिलालजी चौधरी भीलवाड़ा थे।

इस अवसर पर डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल का मार्मिक उद्बोधन हुआ। तथा बालचन्दजी पाटनी एवं अजितकुमारजी तोतूका ने भी सभा को संबोधित किया। पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट का परिचय पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा ने दिया। मंच का संचालन पण्डित शुद्धात्मप्रकाशजी भारिल्ल ने किया।

उद्घाटन के पूर्व श्री बालचन्दजी सुरेशचन्दजी पाटनी कोलकाता परिवार ने झण्डारोहण किया।

ज्ञातव्य है कि शिविर के **आमंत्रणकर्त्ता** स्व. राजमलजी पाटनी की स्मृति में श्रीमती रतनदेवी पाटनी एवं सुपुत्र श्री अशोककुमारजी पाटनी कोलकाता, दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल कोलकाता तथा श्रीमती प्रेमाबाई धर्मपत्नी श्री शान्तिलालजी सर्राफ खिमलासा परिवार थे।

शिविर के मध्य नवीन प्रकाशित पुस्तकों में सत्य की खोज गुजराती, समयसार का सार, सम्यग्दर्शन, धर्म के दशलक्षण, तीर्थंकर भगवान महावीर, मैं कौन हूँ, मैं स्वयं भगवान हूँ, अहिंसा महावीर की दृष्टि में, शीलवान सुदर्शन, उपसर्गजयी सुकुमाल, जैन नर्सरी हिन्दी एवं अंग्रेजी नामक पुस्तकों का विमोचन हुआ।

ब्र.यशपालजी जैन द्वारा चलाये जा रहे **कण्ठ पाठ योजना** के अभियान में लगभग 90 लोगों ने भाग लेकर समयसार, नियमसार, नाटक समयसार, द्रव्य संग्रह, तत्त्वार्थसूत्र आदि अनेक ग्रन्थों को अपने कण्ठ का हार बनाया। सभी प्रतिभाओं को पुरस्कृत किया गया।

दिनांक 11 अक्टूबर 2003 को **समापन समारोह** के अवसर पर अध्यक्ष के रूप में श्री जगनमलजी सेठी इम्फाल, मुख्य अतिथि के रूप में श्री प्रेमचन्दजी बजाज कोटा तथा विशिष्ट अतिथि के रूप में श्री संतोषजी पाटनी वाशिम, श्री जुगराजजी कासलीवाल कोलकाता, श्री शान्तिलालजी सर्राफ खिमलासा एवं श्री ताराचन्दजी सौगाणी मंचासीन थे। सभा का संचालन पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील ने किया। आभार प्रदर्शन पण्डित पीयूषकुमारजी शास्त्री ने किया।

शिविर में सम्पूर्ण देश से पधारे लगभग 1100 मुमुक्षु भाई-बहिनों ने लाभ लिया। इस अवसर पर 23 हजार रुपये का सत्साहित्य एवं 1872 घण्टों के सी.डी. एवं ऑडियो कैसिट्स घर-घर पहुँचे।

वैराग्य समाचार

1. श्री कुन्दकुन्द कहान दिग. जैन तीर्थसुरक्षा ट्रस्ट के ट्रस्टी श्री हरकचन्दजी बिलाला, अकोला का दिनांक 11 अक्टूबर, 03 को प्रात: देहावसान हो गया। आप जैनदर्शन के अच्छे मर्मज्ञ विद्वान थे।

2. श्री टोडरमल दि. जैन सि. महाविद्यालय के स्नातक पण्डित यशवंतजी जैन (छाजेड़) खैरागढ़ का 29 सितम्बर, 03 को देहावसान हो गया है। आप कानजीस्वामी स्मारक ट्रस्ट देवलाली में प्रवचनकार एवं विधानाचार्य के रूप में 10 वर्ष तक सेवायें देते रहे।

3. श्री सुरेन्द्रकुमारजी जैन (कागजी) का दिल्ली में 5 अक्टूबर को देहावसान हो गया। आप तत्त्वलाभ लेने हेतु टोडरमल स्मारक भवन, जयपुर में ही रहा करते थे।

4. श्रीमती भँवरीदेवी घीसालालजी छाबड़ा सीकरवालों का दिनांक 27 सितम्बर, 03 को स्वर्गवास हो गया। स्मारक ट्रस्ट से चलनेवाली सभी गतिविधियों में आपका सदैव योगदान रहता था।

उक्त सभी के स्वर्गवास पर श्री टोडरमल स्मारक भवन, जयपुर में आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर के समापन समारोह के अवसर पर श्रद्धांजली सभा आयोजित कर भावपूर्ण श्रद्धांजली दी गई।

अहिंसा चैनल पर डॉ. भारिल्ल

सैटेलाइट जगत में जैनसमाज के धर्मलाभार्थ प्रारंभ हुये **अहिंसा** टी.वी. चैनल पर दि. 2 अक्टूबर,03 से जैनदर्शन के तार्किक विद्वान डॉ. भारिल्ल के अहिंसा, शाकाहार, वस्तु-स्वातंत्र्य, भगवान महावीर का जीवन-दर्शन आदि विविध विषयों के प्रवचनों का प्रसारण प्रात: 8.30 से 9.00 बजे तक हो रहा है। इनके अतिरिक्त अनेक साधु-संत एवं विद्वानों के प्रवचनों का लाभ भी इस चैनल पर प्राप्त होगा। यह चैनल नि:शुल्क है; अत: आप अपने केबल ऑपरेटर को निम्न सूचना देकर इसका लाभ ले सकते हैं -

Satellite	**:**	**INSAT (Expanded Coverage 93.5^{0}E)**
Polarisation	**:**	**Vertical**
Downlink Prequcney	**:**	**3915.5 MHz-3920.0MHz**
FEC	**:**	**3/4**
Symbol Rate	**:**	**3030 KSPS**

शिक्षण-शिविर सानन्द सम्पन्न

मुंबई : यहाँ श्री दि. जैन मुमुक्षु समाज बृहन्मुंबई के तत्त्वावधान में अ. भा. जैन युवा फैडरेशन जवेरी बाजार मुंबई द्वारा श्रीमती कैलाशबेन विनोदचन्द्र रायचन्द्र शाह परिवार के सहयोग से द्वितीय त्रिदिवसीय आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर दिनांक 26 सितम्बर से 28 सितम्बर 2003 तक विशेष उपलब्धियों के साथ सम्पन्न हुआ।

इस शिविर में पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री छिंदवाड़ा, पण्डित शैलेशभाई शाह तलोद, पण्डित रजनीभाईजी दोशी हिम्मतनगर आदि विद्वानों का लाभ प्राप्त हुआ।

शिविर के दौरान प्रात: गुरूदेवश्री के सी. डी. प्रवचन के अतिरीक्त दोनों समय छह प्रवचनों का लाभ समाज को प्राप्त हुआ। समापन समारोह में श्री मुकुंदभाई खारा ने सभा को संबोधित किया, श्री प्रदीपजी खारा ने फैडरेशन की गतिविधियों की जानकारी दी तथा चेअरमेन श्री वीनूभाई ने आभार प्रदर्शन किया। संचालन श्री उल्लासभाई ने किया। **– भरतभाई शाह**

डॉ. भारिल्ल के आगामी कार्यक्रम

19 नवम्बर से 24 नवम्बर 2003	सहारनपुर	पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव
10 एवं 11 दिसम्बर	दिल्ली	शिलान्यास (आत्मार्थी ट्रस्ट)
12 एवं 13 दिसम्बर	पूना	शिलान्यास (अस्पताल)

एक ही माह में दो-दो पंचकल्याणक

इस वर्ष मुमुक्षु समाज को उत्तरप्रदेश के कुरावली एवं सहारनपुर दोनों स्थानों पर नवम्बर माह में होनेवाले पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सवों का लाभ मिलेगा।

ज्ञातव्य है कि कुरावली में दिनांक 8 नवम्बर से 14 नवम्बर 2003 तक तथा सहारनपुर में 18 नवम्बर से 24 नवम्बर 2003 तक होनेवाले पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव बाल ब्र. अभिनन्दनकुमारजी शास्त्री खनियांधाना के प्रतिष्ठाचार्यत्व तथा बाल ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री सनावद के निर्देशन में सम्पन्न होंगे।

सभी साधर्मी बन्धुओं से अनुरोध है कि ऐसे मांगलिक अवसर पर सपरिवार एवं इष्ट मित्रों सहित पधारकर धर्मलाभ लेवें।